39676 - तशह्हुद में नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम पर दुरूद भेजने का हुक्म

प्रश्न

तरावीह की नमाज़ के दौरान इमाम बहुत जल्दी से सलाम फेरता है। मुझे केवल पहला तशह्हुद खत्म करने के लिए पर्याप्त समय मिलता है। लेकिन मेरे दूसरा तशह्हुद (दुरूद इबराहीमी) पढ़ने से पहले ही वह सलाम फेर देता है।

तो क्या यह जायज़ है कि मैं इसी बिंदु पर अपनी नमाज़ समाप्त कर दूँ? या कि दुरूद इबराहीमी पढ़ना अनिवार्य है?

विस्तृत उत्तर

सर्व प्रथम :

नमाज़ में तशह्हुद में नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम पर दुरूद भेजने के हुक्म के विषय में विद्वानों ने मतभेद किया है। चुनाँचे उनमें से कुछ ने कहा है कि यह नमाज़ का एक स्तंभ (यानी आवश्यक हिस्सा) है, जिसके बिना नमाज़ सही (मान्य) नहीं होती है। जबकि उनमें से कुछ दूसरों ने उसे अनिवार्य कहा है। तीसरा कथनः यह है कि यह एक मुस्तहब सुन्नत है, अनिवार्य नहीं है।

शैख मुहम्मद सालेह अल-उसैमीन रहिमहुल्लाह ने तीसरे कथन को राजेह माना है। उन्होंने ''ज़ादुल-मुस्तक़्ने'' पर अपनी टिप्पणी में कहा:

लेखक का कथनः "और उसमें नबी सल्ल्लाहु अलैहि व सल्लम पर दुरूद भेजना'' अर्थात् आखिरी तशह्हुद में, और यह नमाज़ के स्तंभों में से बाहरवाँ स्तंभ है।

इस बात का प्रमाण यह है किः सहाबा ने नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से पूछा: "ऐ अल्लाह के रसूल! हम यह सीख चुके हैं कि आप पर सलाम कैसे भेजें, सो हम आप पर दुरूद कैसे भेजें? आप ने फरमाया : "कहो: अल्लाहुम्मा सल्लि अला मुहम्मद, व अला आलि मुहम्मद'' (ऐ अल्लाह! मुहम्मद पर और मुहम्मद के परिवार पर दुरूद भेज)।" यह एक आदेश है जो उसके अनिवार्य होने की अपेक्षा करता है, और अनिवार्य के बारे में बुनियादी सिद्धांत यह है कि वह फ़र्ज़ (जरूरी) है, यदि उसे छोड़ दिया जाता है तो इबादत अमान्य हो जाएगी। इस तरह से फ़ुक़हा (धर्मशास्त्रियों) ने इस मसअले के प्रमाण को स्पष्ट किया है।

लेकिन अगर आप इस हदीस पर चिंतन करें, तो आपके लिए इससे यह स्पष्ट नहीं होता है कि नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम पर दुरूद पढ़ना रुक्न (नमाज़ का एक स्तंभ) है। क्योंकि सहाबा ने केवल तरीक़ा जानना चाहा था; हम कैसे दुरूद भेजें? तो नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने उन्हें उसकी ओर रहनुमाई की। इसलिए हम कहते हैं कि आपके कथनः "क़ूलू'' (अर्थात् कहो) में आदेश की शैली का मतलब यह नहीं है कि यह अनिवार्य है; बल्कि यह मार्गदर्शन करने और सिखाने के लिए है। अगर कोई अन्य प्रमाण है जो नमाज़ में नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम पर दुरूद भेजने का आदेश देता है, तो उसपर भरोसा किया जाएगा। यदि इस

हदीस के अलावा कुछ भी नहीं है, तो यह अनिवार्यता को इंगित नहीं करता है, फिर यह इस बात को कैसे इंगति कर सकता है कि यह नमाज़ का एक स्तंभ है। इसलिए विद्वानों ने इस मामले में मतभेद किया है और इस बारे में उनके कई कथन हैं :

पहला कथनः यह है कि यह नमाज़ का एक स्तंभ (रुक्न) है। यह हंबली मत का प्रसिद्ध दृष्टिकोण है। अतः नमाज़ इसके बिना मान्य नहीं है।

दूसरा कथनः यह है कि यह वाजिब (अनिवार्य) है, लेकिन रुक्न (स्तंभ) नहीं है। अतः अगर भूलकर इसे छोड़ दिया जाता है, तो सजदा-सह्व के द्वारा उस कमी को पूरा किया जाएगा।

उन्होंने कहा : ऐसा इसलिए है क्योंकि हदीस के शब्दः "कहो: अल्लाहुम्मा सल्लि अला मुहम्मद'' में इस बात की संभावना है कि यह अनिवार्यता दर्शाने के लिए है और इस बात की भी संभावना है कि यह शिक्षा देने के लिए है, और इस संभावना के साथ हम उसे रुक्न नहीं ठहरा सकते जिसके बिना नमाज़ सही (मान्य) नहीं होती है।

तीसरा कथनः यह है कि पैगंबर सल्ल्लाहु अलैहि व सल्लम पर दुरूद भेजना एक सुन्नत है, और वह वाजिब (अनिवार्य) या रुक्न (स्तंभ) नहीं है। यह इमाम अहमद से एक रिवायत है। यदि कोई व्यक्ति जानबूझकर इसे छोड़ देता है, तो उसकी नमाज़ सही (मान्य) है। क्योंकि जो लोग इसे अनिवार्य मानते हैं या जो लोग इसे नमाज़ का एक स्तंभ मानते हैं, उन्हों ने जिन प्रमाणों को तर्क बनाया है वे स्पष्ट रूप से उनके विचारों का समर्थन नहीं करते हैं। और मूल सिद्धांत यह है कि आदमी के लिए कोई चीज़ आवश्यक नहीं है। (वह ज़िम्मेदारी से विमुक्त है).

यह कथन सबसे राजेह (सही होने के सबसे अधिक संभावित) है यदि इस दलील के अलावा कोई अन्य प्रमाण नहीं है जिससे फ़ुक़हा रहिमहुमुल्लाह ने दलील पकड़ी है। क्योंकि हम एक ऐसे प्रमाण के आधार पर (नमाज़ की) इबादत को अमान्य और फासिद नहीं मान सकते, जिसमें इस बात की संभावना है कि उससे अभिप्राय अनिवार्य ठहराना है या उसका मतलब मार्गदर्शन करना और निर्देश देना है।''

''अश-शर्हुल-मुम्ते'' (3 / 310-312).

इस कथन के आधार पर, दुरूद के बिना नमाज़ सही (मान्य) है।

दूसरी बात यह है कि :

इस इमाम और इसके अलावा अन्य इमामों को, जो तरावीह की नमाज़ में अत्यंत जल्दी करते हैं, नसीहत करना चाहिए। इस तरह वे उन लोगों को अपनी नमाज़ पूरी करने से रोकते हैं जो उनके पीछे होते हैं।

विद्वानों ने स्पष्ट रूप से कहा है कि इमाम को धीरे-धीरे नमाज़ पढ़ानी चाहिए ताकि मंडली में नमाज़ पढ़ने वाले वाजिबात (अनिवार्य भागों) और कुछ सुन्नतों की अदायगी कर सकें, तथा उसके लिए इस तरह जल्दबाज़ी करना घृणित है कि वह मंडली में नमाज़ पढ़ने

वाले लोगों को ऐसा करने से रोक दे।

नववी ने कहा :

इस अध्याय की हदीसों – अर्थात् वे हदीसें जिनमें इमाम को नमाज़ हल्की करने का आदेश दिया गया है – का अर्थ स्पष्ट है और वह इमाम को नमाज़ हल्की करने का आदेश है इस तौर पर कि वह उसकी सुन्नत और उसके उद्देश्यों में कमी न करे।

तथा अल-मौसूअतुल फ़िक़्हिय्या (14/243) में आया है :

नमाज़ को हल्की बनाने का मतलब यह है कि वह पूर्णता के न्यूनतम स्तर पर सीमित रहे। चुनाँचे उसके वाजिबात (अनिवार्य भागों) और सुन्नतों को पूरा करे, तथा वह कम से कम पर निर्भर न करे और न सबसे पूर्ण तरीके को अपनाए।

इब्ने अब्दुल-बर्र ने कहा :

विद्वानों के निकट इस बात पर सर्वसहमति है कि प्रत्येक इमाम के लिए नमाज़ को हल्की बनाना मुस्तहब है, परंतु इससे अभिप्राय पूर्णता का न्यूनतम स्तर है, लेकिन किसी भी हिस्से को छोड़ने या कमी करने की अनुमति नहीं है ... फिर उन्होंने कहा: मैं इस तथ्य के विषय में विद्वानों के बीच किसी भी मतभेद (भिन्न राय) के बारे में नहीं जानता कि नमाज़ हल्की करना हर उस व्यक्ति के लिए मुस्तहब है जो नमाज़ में लोगों की इमामत करता है लेकिन पूर्णता के न्यूनतम स्तर का पालन करने की शर्त पर।

इब्ने क़ुदामह अल-मुगनी (1/323) में कहते हैं :

इमाम के लिए क़ुरआन, तस्बीह और तशह्हुद को इतना ठहर-ठहर कर पढ़ना मुस्तहब है जितना कि वह समझता है कि उसके पीछे नमाज़ पढ़ने वाला वह व्यक्ति जिसकी ज़ुबान भारी है, उसे पढ़ लिया है। तथा वह अपने रुकू और सज्दे इतनी देर तक करे, जितनी देर में वह समझता है कि बूढ़ा और जवान तथा भारी-भरकम व्यक्ति ने उसे कर लिया है। यदि वह ऐसा नहीं करता है और अपने पीछे के लोगों पर ध्यान दिए बिना अपनी गति से करता है, तो यह मकरूह (घृणित) है, लेकिन उसके लिए पर्याप्त है।

तथा "अल-मौसूअतुल फिक़्हिय्या (6/213)" में यह कहा गया है :

उसके लिए इतनी जल्दबाज़ी करना मकरूह (अनेच्छि) है जो उसके पीछे नमाज़ अदा करने वाले मुक़्तदी को सुन्नतों को करने से रोक दे, जैसे कि रुकू और सज्दे में तीन बार तस्बीह पढ़ना, तथा अंतिम तशह्हुद में जो चीज़ें सुन्नत हैं उन्हें पूरा करना।

शैख इब्ने उसैमीन रहिमहुल्लाह ने "रोज़ा, ज़कात और तरावीह के अहकाम" से संबंधित अपनी पुस्तिका में कहते हैं :

"किन्तु आजकल कुछ लोग जो अत्यंत जल्दबाज़ी से काम लेते हैं, वह शरीअत के विरूद्ध है। अगर उससे किसी वाजिब या रूक्न के अंदर खराबी पैदा होती है तो इससे नमाज़ बातिल (अमान्य) हो जाएगी।

बहुत-सी मस्जिदों के इमाम तरावीह की नमाज़ में धीमेपन और ठहराव से काम नहीं लेते हैं। यह उनकी गलती है, क्योंकि इमाम केवल अपने लिए नमाज़ नहीं पढ़ता है, बल्कि अपने लिए और अपने अलावा (मुक़्तदियों) के लिए भी नमाज़ पढ़ता है। अतः उसका स्थान अभिभावक (सरपरस्त) के समान है जिस पर अनिवार्य होता है कि वह ऐसा काम करे जो सब से बेहतर और सबसे उचित हो। विद्वानों ने उल्लेख किया है कि इमाम के लिए इस स्तर तक जल्दबाज़ी करना मकरूह (घृणित) है जो मुक़्तदियों के लिए वाजिबात की अदायगी में रुकावट हो।” उद्धरण समाप्त हुआ।

और अल्लाह तआला ही सबसे अधिक ज्ञान रखता है।